

महाकवि कालिदास की साहित्यिक दृष्टि में आकाशतत्त्व

दिनेशमणि त्रिपाठी एवं दानपति तिवारी

<https://doi.org/10.61410/had.v31i3.339>

महाकवि कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तलम् के नान्दी पाठ में अष्टमूर्ति भगवान् शिव की स्तुति की स्तुति करते हुए जिन आठ तत्त्वों के रूप में प्रत्यक्ष रूप से स्थित उनके स्वरूप की विवेचना की है उनमें से आकाश एक प्रमुख तत्त्व है जिसका गुण शब्द है तथा जो सम्पूर्ण संसार को व्याप्त करके प्रत्यक्ष रूप से स्थित है—

श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्त विश्वम्।¹

वैशेषिक दर्शन में भी आकाश के सन्दर्भ में कहा गया है कि—

शब्दगुणकमाकाशम् तच्चैकं विभुं नित्यं च।²

अर्थात् शब्द नामक गुण से युक्त द्रव्य को आकाश कहते हैं। वह एक, सर्वव्यापी और नित्य है। इस दर्शन में जिन नौ द्रव्यों की विवेचना की गयी है उनमें से पञ्चम द्रव्य आकाश है तथा वह शब्दरूपी विशेषगुण से युक्त है। अतः उसका लक्षण हुआ—

समवायसम्बन्धेन शब्दाश्रयत्वमाकाशतत्त्वम्।

कहने का अभिप्राय यह है कि जिसमें समवाय सम्बन्ध से शब्द नामक विशेष गुण रहता है उसे आकाश कहा जाता है। वह एक मात्र तथा अखिल विश्व में व्याप्त है, वह विभु है तथा समस्त मूर्त द्रव्यों से संयुक्त रहना ही उसका विभुत्व है—सर्वमूर्तद्रव्यसंयोगित्वं विभुत्वम्। महाकवि कालिदास ने वैशेषिक दर्शन में वर्णित नौ द्रव्यों का अपनी साहित्यसर्जना के अन्तर्गत विशेष विवेचना करते हुए उन्हें अपनी लेखनी का विषय बनाया है। इनमें से आकाशतत्त्व उनकी साहित्यिक दृष्टि में नितान्त वर्णनीय है। उन्होंने रघुवंश महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में चन्द्रमा को अत्रि ऋषि के नेत्र से प्रादुर्भूत तथा आकाश में स्थित स्वीकार किया है—

अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेखि द्यौः

सुरसरिदिव तेजोवनिष्ठयूतं मैशम्।³

इसी महाकाव्य के अष्टमसर्ग में महाकवि कालिदास ने सूर्यवंशी राजा रघु के संन्यास लेने तथा ऐश्वर्यशाली अज के राजगद्दी पर विराजमान होने की स्थिति को उस आकाश के सदृश स्वीकार किया है जिसमें एक ओर चन्द्रमा अस्त हो रहा है तथा दूसरी ओर सूर्य उदित हो रहा है—प्रशमस्थितपूर्वपार्थिवं कुलमभ्युद्यतनूतनेश्वरम्। नभसा निभृतेन्दुना तुलामुदितार्केण समारुरोह तत्।।⁴

इस प्रकार कालिदास जी की साहित्यिक दृष्टि में उदयाचल और अस्ताचल दोनों आकाश में स्थित होते हैं तथा चन्द्रमा का अस्ताचल की ओर जाना और सूर्य का उदयाचल की ओर अग्रसर होना

- प्रधानाचार्य, एल0पी0के0 इण्टर कॉलेज, बसडीला—सरदारनगर, गोरखपुर (उ0प्र0)
- प्राचार्य, का0सु0 साकेत पी0जी0 कॉलेज, अयोध्या, (उ0प्र0)

एक साथ दुःख के पश्चात् सुख के संकेत होते हैं जो मानवजीवन का एक महत्वपूर्ण अंश है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क में भी महाकवि ने दोनों ही स्थितियों का वर्णन करते हुए कहा है—

यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीनामाविष्कृतोऽरुणपुरःसर एकतोऽर्कः।
तेजोद्वयस्य युगपदव्यसनोदयाभ्यां लोकोनियम्यत इवात्मदशान्तरेषु॥⁵

रघुवंश में वर्णित है कि राजा दशरथ के चारों पुत्रों के जन्म के समय आकाशीय कल्पवृक्षों से जिन पुष्पों की वर्षा हुई उन्हीं से उनके मातृलिक संस्कारों का श्रीगणेश हुआ—

सन्तानमयी वृष्टिर्भवने चास्य पेतुषी।

सन्मूलोपचाराणां सेवादिरचनाऽभवत्॥⁶

महाकवि कालिदास ने मेघदूतम् गीतिकाव्य में कहा है कि आषाढकालीन मेघ से यक्ष कहता है—तुम्हारी गर्जना सुनकर मानसरोवर जाने के उत्सुक राजहंस अपने चञ्चुओं में डबल लिए हुए तुम्हारे साथ—साथ आकाश में उड़ते हुए कैलासपर्वत तक जायेंगे—

आ कैलासादिकसलयच्छेदपाथेयवन्तः सम्पत्स्यन्ते नभसि भवतोरारजहंसाः सहायाः॥⁷

इसी गीतिकाव्य में महाकवि ने आकाश का वर्णन करते हुए कहा है कि मेघ को देखकर बलाकायें पंक्तिबद्ध होकर अवश्य ही आकाश में उड़कर आती होंगी—

गर्भाधानक्षणपरिचयान्नूनाबद्धमालाः सेविष्यन्ते नयनसुभगं खे भवन्तं बलाकाः⁸

रघुवंश महाकाव्य के त्रयोदश सर्ग में कालिदास शब्दगुणात्मक आकाश में जाते हुए गुणी रामाभिधान हरि (विष्णु) ने सीता से कहा कि फेन से भरे हुए समुद्र को तो देखो, जिसे मेरे द्वारा निर्मित सेतु ने मलयपर्वत तक इस प्रकार द्विधा विभाजित कर दिया है जैसे सुन्दर तारों से परिपूर्ण शरदकालीन खुले आकाश को आकाशगङ्गा दो भागों में विभक्त कर देती है—

अथात्मनः शब्दगुणं गुणज्ञः पदं विमानेन विगाहमानः।

रत्नाकरं वीक्ष्य मिथः स जायां रामाभिधानो हरिरित्युवाच॥

वैदेहि! पश्यामालद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलम्बुराशिम्।

छायापथेनेव शरत्प्रसन्नमाकाशमाविष्कृतचारुतारम्॥⁹

विष्णु के लिए ऋग्वेद में त्रिविक्रम विशेषण प्रयुक्त हुआ है यहाँ उल्लिखित है कि अपने तीन पगों में उन्होंने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को नाप लिया था। इसका उल्लेख पुराणों में भी हुआ है महाकवि कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य के षोडशसर्ग में आकाश के निमित्त द्वितीय विष्णुपदशब्द का प्रयोग किया है। यहाँ उनका कथन है कि जैसे चन्द्रमा उदित होकर समुद्र को तट पर खींच लेता है, वैसे ही श्वेत छत्रधारी कुश अपनी सेना को रघुकुल की पुरानी राजधानी अयोध्या की ओर लेकर चले जा रहे थे तथा इस स्थिति में उनकी सेना का भार पृथ्वी सहन नहीं कर सकी। अतएव उड़ती हुई धूल ऐसी लग रही थी कि जैसे पृथ्वी विष्णु के द्वितीय पक्ष अर्थात् आकाश में पहुँच गयी हो—

वसुन्धरा विष्णुपदं द्वितीयमध्यारुरोहेव रजश्छलेन॥¹⁰

कुमारसम्भवम् महाकाव्य के षष्ठ सर्ग में आकाश से उतरते हुए मुनियों को जल में पड़े हुए सूर्य के समान प्रतिबिम्बित माना गया है—

गगनादवतीर्णा सा यथावृद्धपुरःसरा ।
तोयान्तर्भास्करालीवरेजे मुनिपरम्परा ॥¹¹

इसी महाकाव्य में कहा गया है कि संयमियों में श्रेष्ठ महोदव जी के विवाह के लिए उत्सुक होकर जब सप्तऋषियों को औषधिप्रस्थ नगर जाने का आदेश दिया गया तो वे 'तथास्तु' कहकर मन के समान द्रुतगामी परमर्षि कृपाणसृश नीले आकाश में उड़ते हुए शीघ्र वहाँ जा पहुँचे—

ते चाकाशमसिंभ्यासमसमुत्पत्य परमर्षयः ।
आसेदुरोषधिप्रस्थं मनसा समरंहसः ॥¹²

कुमार सम्भव के आठवें सर्ग में महाकवि कालिदास ने आकाश का अत्यन्त ही सुन्दर वर्णन किया है। वे कहते हैं कि सूर्य ने आकाश से आतपरूपी जल खींच लिया है अतः आकाश उस तालाब के सदृश दिखायी पड़ रहा है जिसमें पूर्व दिशा में अन्धकार बढ़ते जाने से उधर कीचड़ ही शेष रहा गया है तथा पश्चिम दिशा में प्रकाश रहने से ऐसा प्रतीत हो रहा है कि उधर अभी किञ्चित् जल अवशिष्ट है—

पूर्वभागतिमिरप्रवृत्तिभिर्व्यक्तपद्मभिव जातमेकतः ।
खं हृतातपजलं विवस्वता भाति किञ्चिदिव शेषवत्सरः ॥¹³

महाकवि ने ऋतुसंहार में भी आकाश का मनोग्राही वर्णन करते हुए कहा है कि ग्रीष्मऋतु में प्यास के कारण जिनके तालु सूख गये हैं ऐसे हिरण जो अतिसंतृप्त हैं वे नीले आकाश को देखकर वन में जल है ऐसा सोचकर दौड़ रहे हैं—

मृगाः प्रचण्डातपतापिता भृशं तृषा महत्या परिशुष्क तालवः ।
वनान्तरे तोयमिति प्रधाविता निरीक्ष्य भिन्नाऽजनसन्निभं नभः ॥¹⁴

ऋतुसंहार के तृतीय सर्ग में महाकवि कालिदास ने जलाशयों के सौन्दर्य — वर्णन में कहा है कि स्वच्छकमलों से व्याप्त तथा राजहंसों से सेवित पन्ने (मरकतमणि) के सदृश शोभायमान जल में सुशोभित विपुल जलाशयों की छटा को मेघहीन तथा चन्द्र एवं तारागणों से परिपूर्ण आकाश धारण कर रहा है—

श्रियमतिशयरूपां व्योम तोयाशयानां वहति विगतमेघचन्द्रतारावकीर्णम् ॥¹⁵

विक्रमोर्वशीयम् नाटक में पूर्व दिशा से आते हुए किसी रथ के शब्द को सुनकर सूत कहता है कि यह कोई तपाये हुए सोने से निर्मित बाजूबन्द को धारण किये हुए इस पर्वत की चोटी पर आकाश से उस प्रकार उतर रहा है, जैसे कोई बिजली वाला बादल हो—

अयं च गगनात् कोऽपि तप्तचामीकराद्दः ।
अधिरोहति शैलाग्रं तडित्वानिव तोयदः ॥¹⁶

इसी नाटक में ईश्वर को आकाश तथा पृथिवी में सर्वत्र व्याप्त कहा गया है—

वेदान्तेषु यमाहुरेकपुरुषं व्याप्य स्थितं रोदसी।¹⁷

यहाँ प्रयुक्त 'रोदसी' शब्द आकाश और पृथिवी दोनों का ही वाचक है।

इस नाटक के द्वितीय अंक में नेपथ्य से वैतालिक राजा की जय-जयकार करता हुआ कहता है कि हमारे विचार से आप और सूर्य दोनों प्रतिदिन अपना-अपना कार्य यथोचितविधि से सम्पादित करते हैं, क्योंकि सूर्यदेव संसार का अन्धकार दूर करते हैं तथा आप प्रजा के कष्टों का हरण करते हैं। नक्षत्रों के राजा सूर्य अपने कार्य से अवकाश पाकर आकाश में क्षणभर विश्राम करते हैं और आप भी अपने राजकाज से अवकाश पाकर तीसरे पहर विश्राम करते हैं—

त्रिष्ठत्येकः क्षणमधिपतिर्ज्योतिषां व्योममध्ये।¹⁸

इस प्रकार महाकवि कालिदास ने शब्दगुणात्मक आकाश का अपने साहित्य में विविधरूपों में सर्वत्र प्रयोग किया है। वे आकाश को विष्णुपद कहकर भी सम्बोधित करते हैं जिससे आकाश की महत्ता स्वयमेव दृष्टिगोचर होती है। कुमारसम्भव में एक स्थल पर माँ पार्वती के प्रति अपनी अगाधश्रद्धा प्रकट करते हुए उन्होंने कहा है कि पार्वती जी ऐसी प्रतीत हो रही थी जैसे सोने के सुमेरु पर्वत पर उत्पन्न होने वाली सुनहली लता में फल आ गया हो अथवा आकाश गंगा में कमल खिल उठा हो—

हैमीफलं हेमगिरेर्लतेव विकस्वरं नाकनदीवपद्मम्।¹⁹

इसी महाकाव्य में आकाश का उल्लेख करते हुए महाकवि कालिदास ने कहा है कि कुमार कार्तिकेय के पीछे पीछे चलते हुए इन्द्रादि देवता थोड़ी ही देर में आकाश पार करके अपने स्वर्गलोक में पहुँच गये—उत्तीर्य नक्षत्रपथं मुहूर्तात् प्रपेदिरे लोकमथात्मनीनम्।²⁰

संदर्भ

- 1- अभिज्ञानशाकुन्तलम्—1/1
- 2- तर्कसंग्रह—अन्नंभट्ट—1
- 3- रघुवंशम्—2/75
- 4- वही—8/15
- 5- अभिज्ञानशाकुन्तलम्—4/2
- 6- रघुवंशम्—10/77
- 7- मेघदूतम्—1/11
- 8- वही—1/10
- 9- रघुवंशम्—13/1-2
- 10- वही, 16/28
- 11- कुमारसम्भवम्—6/49
- 12- वही, 6/36
- 13- कुमारसम्भवम्—8/37
- 14- ऋतुसंहार—1/11

- 15- ःतुसंहार-3 / 21
- 16- विक्रमोर्वशीर्यम्-1 / 15
- 17- विक्रमोर्वशीर्यम्-1 / 1
- 18- विक्रमोर्वशीर्यम्-2 / 1
- 19- कुमारसम्भवम्-11 / 26
- 20- कुमारसम्भवम्-13 / 9